[2009] 6 एस. सी. आर. 964

संथानम

बनाम

तमिलनाडु राज्य

(2009 की आपराधिक अपील सं. 826)

अप्रैल 24, 2009

[डॉ. अरिजीत पासायत और अशोक कुमार

गांगुली, न्यायमूर्तिगण]

दंड संहिता, 1860:

धारा 304 (भाग-1) – अभियुक्त द्वारा लकड़ी के लट्ठे से अपने प्रतिद्वंद्वी के सिर पर चोट पहुँचाना – जिसके परिणामस्वरूप पीड़ित की मृत्यु – विचारण न्यायालय द्वारा धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि – उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि – यह निवेदन कि घटना वाद-विवाद के दौरान हुई – अभिनिर्धारित : उपयुक्त दोषसिद्धि धारा 304 (भाग-1) के अधीन होगी – अभियुक्त तदनुसार दोषसिद्ध – 10 वर्ष का कारावास न्यायोचित होगा।

धाराएँ 299 एवं 300 – दोनों के मध्य भेद – स्पष्ट किया गया।

अपीलकर्ता तथा एक अन्य व्यक्ति के विरुद्ध अन्य अपराधों के साथ-साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अभियोजन चलाया गया। अभियोजन का मामला यह था कि अपीलकर्ता एवं अभियोजन साक्षी-1 के खेतिहर नौकर (मृतक) के बीच पानी की पाइपलाइन को लेकर विवाद उत्पन्न हुआ। घटना से दो दिन पूर्व जब मृतक खेतों की सिंचाई कर रहा था, तब अपीलकर्ता ने पाइपलाइन बंद कर दी तथा मृतक द्वारा प्रश्न किए जाने पर उसने मृतक के साथ मारपीट की। घटना के दिन जब अभियोजन साक्षी-1 एवं उसके पति इस संबंध में पंचायत बुलाना चाहते थे, तब अपीलकर्ता अपने सह-अभियुक्त के साथ अभियोजन साक्षी-1 के घर पहुँचा तथा मृतक को खींच लिया।

अपीलकर्ता ने लकड़ी के लट्ठे से मृतक के कंधे, अग्रबाहु एवं सिर पर प्रहार किया, जिसके परिणामस्वरूप पीड़ित गिर पड़ा तथा अचेत हो गया। बाद में उसकी मृत्यु हो गई। विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध कर दंडित किया तथा सह-अभियुक्त को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया। उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता ने यह निवेदन किया कि घटना वाद-विवाद के दौरान हुई थी और इसलिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 लागू नहीं होती। उच्च न्यायालय ने उक्त निवेदन अस्वीकार कर दोषसिद्धि की पुष्टि की।

अपील को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया : 1.1 भारतीय दंड संहिता की योजना में आपराधिक मानव वध मूल वर्ग है और "हत्या" उसकी प्रजाति है। प्रत्येक "हत्या" "आपराधिक मानव वध" है, किन्तु प्रत्येक "आपराधिक मानव वध" "हत्या" नहीं है। सामान्यतः "आपराधिक मानव वध", जिसमें हत्या के विशेष लक्षण नहीं हों, "ऐसा आपराधिक मानव वध जो हत्या की कोटि में नहीं आता" कहलाता है। दंड की गंभीरता को सामान्य अपराध की गंभीरता के अनुपात में निर्धारित करने के उद्देश्य से भारतीय दंड संहिता व्यवहारतः आपराधिक मानव वध की तीन श्रेणियों को मान्यता देती है। प्रथम वह है जिसे "प्रथम श्रेणी का आपराधिक मानव वध" कहा जा सकता है। यह आपराधिक मानव वध का सबसे गंभीर रूप है, जिसे धारा 300 में "हत्या" के रूप में परिभाषित किया गया है। द्वितीय को "द्वितीय श्रेणी का आपराधिक मानव वध" कहा जा सकता है। यह धारा 304 के प्रथम भाग के अधीन दंडनीय है। तत्पश्चात् "तृतीय श्रेणी का आपराधिक मानव वध" है। यह आपराधिक मानव वध का निम्नतम प्रकार है तथा इसके लिए प्रदत्त दंड भी तीनों श्रेणियों में न्यूनतम है। इस श्रेणी का आपराधिक मानव वध धारा 304 के द्वितीय भाग के अधीन दंडनीय है। इन उपबंधों की व्याख्या एवं अनुप्रयोग का सबसे सुरक्षित तरीका यह है कि धारा 299 एवं धारा 300 की

विभिन्न धाराओं में प्रयुक्त मुख्य शब्दों पर विशेष ध्यान केंद्रित रखा जाए। [कंडिका 6 एवं 7] [969-बी-जी]

राजवन्त एवं अन्य बनाम केरल राज्य **एआईआर 1966 एससी 1874;** *रसा सिंह बनाम पंजाब राज्य* **एआईआर 1958 एससी 465;** *आंध्र प्रदेश राज्य बनाम रायवरापु पुन्नय्या एवं अन्य* **(1976) 4 एससीसी 382;** *ब्दुल वहीद खान उर्फ वहीद एवं अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य* **जे.टी. 2002 (6) एससी 274;** *ऑगस्टीन सल्डान्हा बनाम कर्नाटक राज्य* **(2003) 10 एससीसी 472** तथा *थंगैया बनाम तमिलनाडु राज्य* **(2005) 9 एससीसी 650, संदर्भित।**

1.2 वर्तमान मामले के विशिष्ट तथ्यों में उपयुक्त दोषसिद्धि भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (भाग-1) के अधीन होगी। 10 वर्ष का सश्रम कारावास न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति करेगा। [कंडिका 19] [975-एफ-जी]

नज़ीर संदर्भ :

1966 एससी 1874	**संदर्भित**	**कंडिका 10**
एआईआर 1958 एससी 465	**संदर्भित**	**कंडिका 11**
(1976) 4 एससीसी 382	**संदर्भित**	**कंडिका 18**
जे.टी. 2002 (6) एससी 274	**संदर्भित**	**कंडिका 18**
(2003) 10 एससीसी 472	**संदर्भित**	**कंडिका 18**
(2005) 9 एससीसी 650	**संदर्भित**	**कंडिका 18**

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील संख्या 826/2009।

मद्रास उच्च न्यायालय, मदुरै पीठ द्वारा आपराधिक अपील (एमडी) संख्या 648/2004 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 11.04.2007 के विरुद्ध।

सुषमा मंचन्दा (एससीएलएससी) — अपीलकर्ता की ओर से।

न्यायालय का निर्णय जिनके द्वारा दिया गया।

डॉ. अरिजीत पसायत, न्यायमूर्ति 1. अनुमति प्रदान की गई।

2. यह अपील मद्रास उच्च न्यायालय, मदुरै पीठ की खंडपीठ द्वारा पारित उस निर्णय के विरुद्ध है, जिसके द्वारा अपीलकर्ता की भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302 (संक्षेप में भा.दं.सं.) के अधीन दोषसिद्धि को यथावत रखा गया। सह-अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सहपठित धारा 114 एवं धारा 506(2) के अधीन विचारण चलाया गया था, किन्तु उसे दोषमुक्त पाते हुए आरोपों से बरी कर दिया गया।

3. अभियोजन का संक्षिप्त मामला इस प्रकार है :—

विवादित घटना दिनांक 09.12.2001 को लगभग दोपहर 2 बजे हुई। अभियोजन साक्षी-1 एवं उसका पति डाक विभाग में कार्यरत थे तथा अपने मूल ग्राम कंजीरिमलैपुदुर कट्टुकोट्टगई में भूमि के स्वामी थे। तिरुप्पथि (जिसे आगे "मृतक" कहा जाएगा) उनके यहाँ खेतिहर सेवक के रूप में कार्यरत था। अभियुक्त-अपीलकर्ता की भूमि अभियोजन साक्षी-1 की भूमि से सटी हुई थी। दोनों के बीच पानी की पाइपलाइन को लेकर विवाद था। घटना से दो दिन पूर्व अर्थात 09.12.2001 को जब मृतक सिंचाई कर रहा था, तब अपीलकर्ता ने पानी की पाइपलाइन बंद कर दी। मृतक द्वारा यह पूछे जाने पर कि उसने पाइपलाइन क्यों बंद की, अपीलकर्ता ने उसे गालियाँ दीं तथा लकड़ी से मारपीट की। मृतक ने उप्पिलियापुरम थाना में शिकायत दर्ज कराई। जब अभियोजन साक्षी-1 एवं उसके पति को दिनांक 11.12.2001 को इस घटना की जानकारी हुई, तब वे पंचायत बुलाना चाहते थे और इसी उद्देश्य से अभियोजन साक्षी-1, उसका पति तथा अन्य लोग लगभग दोपहर 2 बजे अभियोजन साक्षी-1 के घर के सामने एकत्रित हुए। उसी समय अपीलकर्ता एवं दूसरा अभियुक्त टी.वी.एस.-50 वाहन से आए और दोनों ने मृतक तिरुप्पथि को पकड़कर हाथों से मारपीट की। उन्होंने हस्तक्षेप कर मृतक पर आक्रमण करने से उन्हें रोका। जब मृतक तिरुप्पथि, धन्डापाणि के घर की ओर गया, तब अपीलकर्ता एवं दूसरा अभियुक्त उसका पीछा करते हुए वहाँ पहुँचे। अपीलकर्ता ने लकड़ी के गुटके से मृतक के दाहिने कंधे, दाहिने अग्रबाहु तथा सिर पर प्रहार किया, जिससे मृतक गिर पड़ा और अचेत हो गया। दूसरे अभियुक्त ने अपनी कमीज़ से धारदार हथियार निकालकर

गवाहों को गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी। तत्पश्चात् दूसरे अभियुक्त ने उक्त धारदार हथियार अपीलकर्ता को दे दिया और दोनों घटनास्थल से भाग गए। इसके तुरंत बाद अभियोजन साक्षी-1 एवं उसका पति रामलिंगम, उप्पिलियापुरम थाना गए तथा शिकायत दर्ज कराई, जिसके आधार पर प्रथम सूचना प्रतिवेदन दर्ज हुआ और अपराध संख्या 658/2001, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन पंजीकृत कर अन्वेषण प्रारंभ किया गया। अभियोजन साक्षी-12 ने दिनांक 12.12.2001 को शव परीक्षण किया तथा यह अभिमत दिया कि मृतक की मृत्यु सिर पर लगी चोटों के कारण उत्पन्न आघात एवं रक्तस्राव से हुई।

अन्वेषण पूर्ण होने पर आरोपपत्र समर्पित किया गया।

मामला सत्र न्यायालय को समर्पित किया गया। आरोप निर्धारित किए गए। अभियुक्तों द्वारा दोष स्वीकार न किए जाने के कारण विचारण संचालित हुआ।

अभियोजन ने आरोप सिद्ध करने हेतु 14 साक्षियों का परीक्षण किया। अपनी निर्दोषता सिद्ध करने हेतु बचाव पक्ष ने तीन साक्षियों का परीक्षण कराया। विचारण न्यायालय ने यह पाया कि दूसरे अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध नहीं हुए हैं और उसे दोषमुक्त कर दिया। उच्च न्यायालय के समक्ष मुख्य तर्क यह था कि कथित प्रत्यक्षदर्शी गवाह घटना को वैसे नहीं देख सकते थे जैसा कि उन्होंने दावा किया है। अभियोजन साक्षी-4 के अनुसार उसने वास्तव में घटना नहीं देखी तथा उसने अभियुक्तों को हमला करते हुए भी नहीं देखा, बल्कि वह बाद में पहुँची और उसने मृतक को गंभीर रूप से घायल अवस्था में पड़ा पाया। यह भी तर्क दिया गया कि चिकित्सीय साक्ष्य तथाकथित मौखिक साक्ष्य से भिन्न है। पक्षकारों के बीच अनेक दीवानी एवं आपराधिक मामले लंबित थे और वर्तमान मामला आपसी शत्रुता का परिणाम था। किसी भी स्थिति में घटना वाद-विवाद के दौरान हुई थी और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 लागू नहीं होती। मृतक अभियोजन साक्षी-1 एवं उसके पति के यहाँ कार्यरत था। पूर्व अवसर पर जब मृतक खेत में गया और अभियुक्त के आचरण पर प्रश्न उठाया, तब विवाद हुआ और उसके विरुद्ध शिकायत दर्ज कराई गई। पंचायत भी बुलाई गई। यह भी तर्क दिया

गया कि चोटें शरीर के महत्वपूर्ण अंगों पर नहीं थीं, अतः यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्त की मृत्यु कारित करने की मंशा थी। उच्च न्यायालय ने यह तर्क स्वीकार नहीं किया कि घटना वाद-विवाद के दौरान हुई थी और अन्य सभी निवेदनों को भी अस्वीकार कर दिया।

4. उच्च न्यायालय के समक्ष जो निवेदन किया गया था, वही वर्तमान अपील में पुनः दोहराया गया। उत्तरदाता-राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने निर्णय का समर्थन किया।

5. मूल प्रश्न यह है कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 302 लागू होती है।

6. भारतीय दंड संहिता की योजना में आपराधिक मानव वध वंश है तथा "हत्या" उसकी प्रजाति। प्रत्येक "हत्या" "आपराधिक मानव वध" है, किन्तु प्रत्येक "आपराधिक मानव वध" "हत्या" नहीं है। सामान्यतः कहा जाए तो "हत्या" की विशिष्ट विशेषताओं से रहित "आपराधिक मानव वध", "ऐसा आपराधिक मानव वध जो हत्या की कोटि में नहीं आता" होता है। सामान्य अपराध की गंभीरता के अनुपात में दंड निर्धारित करने के उद्देश्य से भारतीय दंड संहिता ने व्यावहारिक रूप से आपराधिक मानव वध की तीन श्रेणियाँ मान्य की हैं। प्रथम, जिसे "प्रथम श्रेणी का आपराधिक मानव वध" कहा जा सकता है। यह आपराधिक मानव वध का सर्वाधिक गंभीर रूप है, जिसे धारा 300 में "हत्या" के रूप में परिभाषित किया गया है। द्वितीय, जिसे "द्वितीय श्रेणी का आपराधिक मानव वध" कहा जा सकता है। यह धारा 304 के प्रथम भाग के अधीन दंडनीय है। तत्पश्चात "तृतीय श्रेणी का आपराधिक मानव वध" आता है। यह आपराधिक मानव वध का न्यूनतम प्रकार है और इसके लिए निर्धारित दंड भी तीनों श्रेणियों में न्यूनतम है। इस श्रेणी का आपराधिक मानव वध धारा 304 के द्वितीय भाग के अधीन दंडनीय है।

7. "हत्या" तथा "ऐसा आपराधिक मानव वध जो हत्या की कोटि में नहीं आता" के मध्य शास्त्रीय भेद सदैव न्यायालयों के लिए कठिनाई का विषय रहा है। यह भ्रम तब उत्पन्न होता है जब न्यायालय इन धाराओं में विधायिका द्वारा प्रयुक्त शब्दों के वास्तविक क्षेत्र एवं

अर्थ को दृष्टि से ओझल कर सूक्ष्म अमूर्तताओं में उलझ जाते हैं। इन उपबंधों की व्याख्या एवं अनुप्रयोग का सर्वाधिक सुरक्षित तरीका यह प्रतीत होता है कि धारा 299 तथा धारा 300 की विभिन्न कंडिकाओं में प्रयुक्त मुख्य शब्दों पर ध्यान केंद्रित रखा जाए। दोनों अपराधों के मध्य भेद को समझने हेतु निम्नलिखित तुलनात्मक सारणी सहायक होगी :—

धारा 299	धारा 300
कोई व्यक्ति आपराधिक मानव वध करता है, यदि वह कार्य, जिसके द्वारा मृत्यु कारित की जाती है, किया गया हो — वह हत्या है।	कुछ अपवादों के अधीन, यदि वह कार्य, जिसके द्वारा मृत्यु कारित की जाती है, किया गया हो —
	आशय
(क) मृत्यु कारित करने के आशय से; या	(1) मृत्यु कारित करने के आशय से; या
(ख) ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से, जो मृत्यु कारित करने की संभावना रखती हो; या	(2) ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से, जिसके विषय में अपराधी यह जानता हो कि वह उस व्यक्ति की मृत्यु कारित करने की संभावना रखती है जिसे वह क्षति पहुँचाई गई है; या
	(3) किसी व्यक्ति को शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से, और वह शारीरिक क्षति, जिसे कारित करने का आशय था, प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो; या
	ज्ञान
(ग) इस ज्ञान के साथ कि वह कृत्य मृत्यु कारित करने की संभावना रखता है।	(4) इस ज्ञान के साथ कि वह कृत्य इतना आसन्न रूप से संकटपूर्ण है कि उससे समस्त संभाव्यता में मृत्यु अथवा ऐसी शारीरिक क्षति कारित होगी, जो मृत्यु कारित करने की

संभावना रखती है, तथा मृत्यु अथवा उपर्युक्त वर्णित ऐसी क्षति कारित करने के जोखिम को उठाने हेतु किसी औचित्य के बिना।

8. धारा 299 की खंड (ख), धारा 300 की खंड (2) तथा (3) के अनुरूप है। खंड (2) के अंतर्गत अपेक्षित दोषपूर्ण मनोभाव का विशिष्ट तत्व यह है कि अपराधी को इस बात का ज्ञान हो कि विशेष पीड़ित किसी ऐसी विशेष अवस्था या स्वास्थ्य स्थिति में है कि उसे पहुँचाई गई आंतरिक क्षति घातक सिद्ध होने की संभावना रखती है, यद्यपि सामान्य स्वास्थ्य अथवा स्थिति वाले व्यक्ति की मृत्यु कारित करने हेतु ऐसी क्षति सामान्य प्रकृति में पर्याप्त न होती। यह उल्लेखनीय है कि "मृत्यु कारित करने का आशय" खंड (2) की अनिवार्य आवश्यकता नहीं है। केवल शारीरिक क्षति कारित करने का आशय तथा उस क्षति से विशेष पीड़ित की मृत्यु होने की संभावना के संबंध में अपराधी का ज्ञान, इस कृत्य को उक्त कंडिका के दायरे में लाने हेतु पर्याप्त है। खंड (2) का यह पक्ष धारा 300 के साथ संलग्न दृष्टांत (ख) से भी स्पष्ट होता है।

9. धारा 299 के खंड (ख) में अपराधी की ओर से ऐसे किसी ज्ञान की परिकल्पना नहीं की गई है। धारा 300 के खंड (2) के अंतर्गत आने वाले मामलों के उदाहरण वे हो सकते हैं, जहाँ आक्रमणकारी यह जानते हुए कि पीड़ित का यकृत बढ़ा हुआ है, या तिल्ली बढ़ी हुई है अथवा हृदय रोगग्रस्त है, जानबूझकर मुक्के का प्रहार कर मृत्यु कारित करता है, और ऐसा प्रहार उस विशेष व्यक्ति की मृत्यु कारित करने की संभावना रखता है, जो यकृत अथवा तिल्ली के फट जाने या हृदय के कार्य करना बंद कर देने के परिणामस्वरूप हो सकती है, जैसा भी मामला हो। यदि आक्रमणकारी को पीड़ित की बीमारी या उसकी विशेष दुर्बलता के संबंध में ऐसा कोई ज्ञान न हो, तथा न ही मृत्यु कारित करने अथवा ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने का आशय हो जो प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो, तो अपराध हत्या नहीं होगा, भले ही वह क्षति, जिससे मृत्यु हुई, जानबूझकर कारित की

गई हो। धारा 300 के खंड (3) में, धारा 299 के समतुल्य खंड (ख) में प्रयुक्त शब्द "मृत्यु कारित करने की संभावना" के स्थान पर "प्रकृति के सामान्य क्रम में पर्याप्त" शब्दों का प्रयोग किया गया है। स्पष्टतः, "ऐसी शारीरिक क्षति जो मृत्यु कारित करने की संभावना रखती हो" और "ऐसी शारीरिक क्षति जो प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो" के मध्य अंतर निहित है। यह अंतर सूक्ष्म अवश्य है, परंतु वास्तविक है, और यदि इसे उपेक्षित किया जाए तो न्याय की विफलता हो सकती है। धारा 299 के खंड (ख) और धारा 300 के खंड (3) के मध्य अंतर, आशयित शारीरिक क्षति से उत्पन्न मृत्यु की संभावना की मात्रा का है। व्यापक रूप से कहें तो, मृत्यु की संभावना की मात्रा ही यह निर्धारित करती है कि आपराधिक मानव वध अत्यंत गंभीर, मध्यम अथवा निम्नतम श्रेणी का है। धारा 299 के खंड (ख) में प्रयुक्त शब्द "संभावना" मात्र संभाव्यता से भिन्न, संभावित परिणाम का बोध कराता है। "ऐसी शारीरिक क्षति जो प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो" शब्दों का अर्थ है कि प्रकृति के सामान्य क्रम को दृष्टिगत रखते हुए मृत्यु उस क्षति का "अत्यंत संभावित" परिणाम होगी।

10. ऐसे मामलों में जो खंड (3) के अंतर्गत आते हैं, यह आवश्यक नहीं है कि अपराधी का आशय मृत्यु कारित करने का हो, जब तक कि मृत्यु जानबूझकर कारित की गई ऐसी शारीरिक क्षति या क्षतियों से उत्पन्न हुई हो, जो प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हों। *राजवंत एवं एक अन्य बनाम केरल राज्य*, एआईआर 1966 एससी 1874, इस बिंदु का उपयुक्त उदाहरण है।

11. *वीरसा सिंह बनाम पंजाब राज्य*, एआईआर 1958 एससी 465 में, न्यायमूर्ति विवियन बोस ने न्यायालय की ओर से बोलते हुए खंड (3) के अर्थ एवं परिधि को स्पष्ट किया। यह अभिलक्षित किया गया कि अभियोजन को धारा 300 के "तृतीयतः" के अंतर्गत किसी मामले को लाने से पूर्व निम्नलिखित तथ्यों को सिद्ध करना होगा। प्रथम, उसे पूर्णतः वस्तुनिष्ठ रूप से यह स्थापित करना होगा कि शारीरिक क्षति विद्यमान है; द्वितीयतः, उस

क्षति की प्रकृति सिद्ध करनी होगी। ये पूर्णतः वस्तुनिष्ठ अन्वेषण हैं। तृतीयतः, यह सिद्ध करना होगा कि उस विशिष्ट क्षति को कारित करने का आशय था, अर्थात् वह आकस्मिक अथवा अनिच्छित नहीं थी अथवा किसी अन्य प्रकार की क्षति कारित करने का आशय नहीं था। जब ये तीनों तत्व सिद्ध हो जाएँ, तब अन्वेषण आगे बढ़ता है, और चतुर्थतः यह सिद्ध करना होगा कि उपर्युक्त तीन तत्वों से युक्त वर्णित प्रकार की क्षति प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी। अन्वेषण का यह भाग पूर्णतः वस्तुनिष्ठ एवं अनुमानात्मक है तथा इसका अपराधी के आशय से कोई संबंध नहीं है।

12. भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के "तृतीयतः" खंड के अवयवों को विद्वान न्यायाधीश ने अपने संक्षिप्त शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया :-

> "संक्षेप में कहें तो अभियोजन को धारा 300 के 'तृतीयतः' के अंतर्गत किसी मामले को लाने से पूर्व निम्नलिखित तथ्यों को सिद्ध करना होगा।
>
> प्रथम, उसे पूर्णतः वस्तुनिष्ठ रूप से यह स्थापित करना होगा कि शारीरिक क्षति विद्यमान है।
>
> द्वितीयतः, उस क्षति की प्रकृति सिद्ध करनी होगी। ये पूर्णतः वस्तुनिष्ठ अन्वेषण हैं।
>
> तृतीयतः, यह सिद्ध करना होगा कि उस विशिष्ट शारीरिक क्षति को कारित करने का आशय था, अर्थात् वह आकस्मिक अथवा अनिच्छित नहीं थी, अथवा किसी अन्य प्रकार की क्षति कारित करने का आशय नहीं था।
>
> जब ये तीनों तत्व सिद्ध हो जाएँ, तब अन्वेषण आगे बढ़ता है, और
>
> चतुर्थतः, यह सिद्ध करना होगा कि उपर्युक्त तीन तत्वों से युक्त वर्णित प्रकार की क्षति प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी। अन्वेषण का यह भाग पूर्णतः वस्तुनिष्ठ एवं अनुमानात्मक है तथा इसका अपराधी के आशय से कोई संबंध नहीं है।"

13. विद्वान न्यायाधीश ने तृतीय अवयव को निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट किया (पृष्ठ 468 पर) :-

"प्रश्न यह नहीं है कि अभियुक्त का आशय गंभीर क्षति पहुँचाने का था या तुच्छ क्षति पहुँचाने का, बल्कि यह है कि क्या उसका आशय वही क्षति पहुँचाने का था, जो सिद्ध रूप से विद्यमान पाई गई है। यदि वह यह प्रदर्शित कर सके कि उसका ऐसा आशय नहीं था, अथवा परिस्थितियों की समग्रता से ऐसा निष्कर्ष उचित रूप से निकले, तब निःसंदेह वह आशय सिद्ध नहीं माना जाएगा जिसकी अपेक्षा यह धारा करती है। किंतु यदि क्षति तथा इस तथ्य के अतिरिक्त कि अपीलकर्ता ने वह क्षति कारित की, कुछ और न हो, तो एकमात्र संभावित निष्कर्ष यही होगा कि उसका आशय वही क्षति कारित करने का था। उसे उसकी गंभीरता का ज्ञान था अथवा उसने गंभीर परिणामों का आशय किया था या नहीं, यह अप्रासंगिक है। जहाँ तक आशय का संबंध है, प्रश्न यह नहीं है कि उसका आशय हत्या करने का था अथवा किसी विशेष गंभीरता की क्षति पहुँचाने का था, बल्कि यह है कि क्या उसका आशय विवादित क्षति पहुँचाने का था, और एक बार उस क्षति का अस्तित्व सिद्ध हो जाने पर, उसे कारित करने का आशय अनुमानित किया जाएगा, जब तक कि साक्ष्य अथवा परिस्थितियाँ विपरीत निष्कर्ष का समर्थन न करें।"

14. न्यायमूर्ति विवियन बोस की ये टिप्पणियाँ विधि के क्षेत्र में प्रामाणिक सिद्धांत के रूप में स्थापित हो चुकी हैं। "वीरसा सिंह वाद" (उपर्युक्त) में "तृतीयतः" खंड की प्रयोज्यता के लिए प्रतिपादित परीक्षण अब हमारी विधिक व्यवस्था में समाहित हो चुका है तथा विधि के शासन का अंग बन गया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के "तृतीयतः" खंड के अधीन, आपराधिक मानव वध हत्या होगा, यदि निम्नलिखित दोनों शर्तें पूर्ण हों :- अर्थात् (क) वह कृत्य जिससे मृत्यु हुई, मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया हो अथवा शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो; तथा (ख) वह क्षति, जिसे कारित

करने का आशय था, प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो। यह सिद्ध किया जाना आवश्यक है कि वही विशिष्ट शारीरिक क्षति कारित करने का आशय था, जो प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी, अर्थात् जो क्षति विद्यमान पाई गई, वही क्षति कारित करने का आशय था।

15. इस प्रकार, वीरसा सिंह वाद में प्रतिपादित सिद्धांत के अनुसार, भले ही अभियुक्त का आशय केवल ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने तक सीमित हो, जो प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो, और उसका आशय मृत्यु कारित करने तक विस्तृत न हो, तब भी अपराध हत्या होगा। धारा 300 के साथ संलग्न दृष्टांत (ग) इस बिंदु को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित करता है।

16. धारा 299 का खंड (ग) तथा धारा 300 का खंड (4), दोनों ही उस संभावना के ज्ञान की अपेक्षा करते हैं कि कृत्य से मृत्यु कारित हो सकती है। वर्तमान मामले के प्रयोजनार्थ इन समतुल्य खंडों के मध्य अंतर पर अधिक विस्तार आवश्यक नहीं है। इतना कहना पर्याप्त होगा कि धारा 300 का खंड (4) उन मामलों में लागू होगा, जहाँ अपराधी को अपने अत्यंत संकटपूर्ण कृत्य से किसी विशेष व्यक्ति के बजाय सामान्य रूप से किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों की मृत्यु कारित होने की संभावना का ज्ञान लगभग निश्चितता के स्तर तक हो। अपराधी की ओर से ऐसा ज्ञान अत्यधिक उच्च स्तर की संभावना का होना चाहिए तथा वह कृत्य बिना किसी औचित्य के मृत्यु अथवा उपर्युक्त प्रकार की क्षति कारित करने के जोखिम को उठाते हुए किया गया होना चाहिए।

17. उपर्युक्त केवल व्यापक दिशा-निर्देश हैं, कठोर अपरिवर्तनीय आदेश नहीं। अधिकांश मामलों में उनका अनुपालन न्यायालय के कार्य को सुगम बनाएगा। किंतु कभी-कभी तथ्य इतने परस्पर गुंथे हुए होते हैं तथा द्वितीय और तृतीय चरण इतने परस्पर मिश्रित हो जाते हैं कि उन चरणों से संबंधित विषयों का पृथक् विवेचन करना सुविधाजनक नहीं होता।

18. इस स्थिति को इस न्यायालय ने *आंध्र प्रदेश राज्य बनाम रायवरापु पुन्नय्या एवं अन्य* (1976 (4) एससीसी 382), *अब्दुल वहीद खान उर्फ वहीद एवं अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य* (जेटी 2002 (6) एससी 274), *ऑगस्टीन साल्डान्हा बनाम कर्नाटक राज्य* (2003 (10) एससीसी 472) तथा *थंगैया बनाम तमिलनाडु राज्य* (2005 (9) एससीसी 650) में अत्यंत स्पष्टता से प्रतिपादित किया है।

19. इस मामले के विशेष तथ्यों में उपयुक्त दोषसिद्धि भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग-1 के अंतर्गत होगी। दस वर्ष का कारावास न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पर्याप्त होगा।

20. अपील उपर्युक्त सीमा तक स्वीकृत की जाती है।

आर. पी. अपील की आंशिक रूप से अनुमति है।

एच.

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।